राज्य द्वारा एस.पी., नई दिल्ली

बनाम

रतन लाल अरोड़ा

26 अप्रैल, 2004

[दोराईस्वामी राजू और अरिजीत पासायत, जे.जे.]

अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 - धारा 18 - भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988/1947 - धारा 13/5(2) - सामान्य खंड अधिनियम, 1897 - धारा 8 - दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 360 - 1947 का अधिनियम जो परिवीक्षा पर दोषी की रिहाई को प्रतिबंधित करता है - पुराना अधिनियम 1988 के अधिनियम द्वारा निरस्त किया गया - 1988 के अधिनियम के तहत दोषसिद्धि और सजा - धारा 360 दं.प्र.सं. के तहत परिवीक्षा पर रिहाई द- ` - ना औचित्य अधिनियम निर्धारित 1897 की धारा 8 को ध्यान में रखते हुए जब कोई अधिनियम निरस्त होता है और फिर से अधिनियमित किया जाता है, जब तक कि विधायिका द्वारा अलग इरादा व्यक्त नहीं किया जाता है, तो निरस्त अधिनियम के संदर्भ को फिर से अधिनियमित अधिनियम के प्रावधानों के संदर्भ के रूप में माना जाएगा - दिल्ली में परिवीक्षा अधिनियम के प्रावधानों के विस्तार और प्रवर्तन की तारीख से, पुरानी संहिता की धारा 562 के तहत शक्तियों को निरस्त कर दिया गया और धारा 360 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया, इस प्रकार धारा 360 का आवाहन या लागू नहीं किया जा सकता - इसके अलावा, 1958 के

अधिनियम की धारा 18 को देखते हुए जो परिवीक्षा अधिनियम को 1947 के अधिनियम की धारा 5 (2) के लिए लागू नहीं करता है, जो 1988 के अधिनियम की धारा 13 के अनुरूप है, परिवीक्षा अधिनियम के तहत प्रतिपादित सिद्धांतों को 1988 के अधिनियम की धारा 13(2) के तहत दोषसिद्धि के लिए लागू नहीं किया जा सकता है- संविधियों का निर्वचन।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 360 - भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 - धारा 7 और 13(2) – अपराध – धाराओं के अंतर्गत सजा - न्यूनतम सजा प्रदान करने वाली धाराएँ - परिवीक्षा की रिहाई – अनुज्ञेयता – अभिनिर्धारित: चूँकि संविधि अधिकतम सजा के अलावा न्यूनतम सजा निर्धारित करता है, इसलिए न्यायालय ऐसे मामलों में निर्धारित न्यूनतम सजा से कम कोई नरमी नहीं दिखा सकता है - इस प्रकार, परिवीक्षा का लाभ अनुमेय नहीं है।

प्रत्यर्थी-विद्युत बोर्ड के कर्मचारी ने एक उपभोक्ता से रिश्वत मांगी और स्वीकार की। विचारण न्यायालय ने प्रत्यर्थी को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 7 के तहत दोषी ठहराया और 20 महीने के कठोर कारावास और 2000 रुपये के जुर्माने की सजा व्यतिक्रम शर्त के साथ पारित की; और धारा 13(2) के तहत भी दोषी ठहराया गया और 40 महीने के कठोर कारावास और 2000 रुपये के जुर्माने की सजा व्यतिक्रम शर्त के साथ पारित की। उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने दोषसिद्धि को बरकरार रखा, लेकिन उसे दं.प्र.सं.,1973 की धारा 360 के तहत परिवीक्षा पर रिहा करने का लाभ इस आधार पर दिया कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की प्रयोज्यता से

संबंधित प्रतिबंध 1988 के अधिनियम के तहत अपराध के संबंध में प्रभावी नहीं था, हालांकि 1947 का पुराना अधिनियम दोषी को परिवीक्षा पर रिहा करने और अन्य कम करने वाली परिस्थितियों पर रोक लगाता है। इसलिए वर्तमान अपील।

अपीलार्थी-राज्य ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से गलत है; कि सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 8 के संचालन से 1947 के अधिनियम में निहित परिवीक्षा का प्रतिबंध स्पष्ट रूप से 1988 के अधिनियम पर लागू होता है; और यह कि वैधानिक उद्देश्य को अप्रत्यक्ष रूप से न्यूनतम सजा को कम करके कम नहीं किया जा सकता है।

प्रत्यर्थी-अभियुक्त ने तर्क दिया कि लाभ बढ़ाने के लिए अधिनियम, 1988 में किसी भी रोक के अभाव में उक्त अधिनियम के प्रावधानों को लागू किया जा सकता था; परिवीक्षा अधिनियम की धारा 18 में यह निर्धारित किया गया है कि यह अधिनियम 1947 के पुराने अधिनियम की धारा 5(2) पर लागू नहीं होता है जो 1988 के अधिनियम की धारा 13 से मेल खाता है लेकिन अधिनियम लागू होने के बाद परिवीक्षा अधिनियम में कोई बदलाव नहीं किया गया था और 1988 में लागू किये गये, उक्त अधिनियम के प्रावधानों को 1988 अधिनियम के तहत मामलों पर लागू नहीं किया जा सकता है; कि उच्च न्यायालय ने आकस्मिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए संहिता की धारा 360 को सही ढंग से लागू किया; और यह भी कि लंबा समय बीत जाने के बाद आरोपियों को वापस जेल भेजना उचित नहीं होगा।

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1.1. सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 8 का उद्देश्य यह है कि जहां किसी अधिनियम या विनियम को निरस्त किया जाता है और फिर से अधिनियमित किया जाता है, किसी अन्य अधिनियम में निरस्त पूर्व अधिनियम के प्रावधानों के सन्दर्भ को फिर से अधिनियमित के संदर्भ के रूप में पढ़ा और समझा जाना चाहिए। जब तक कि कोई अलग इरादा प्रकट न हो। [637-ई-एफ.]

1.2. परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 19 में दं.प्र.सं., 1898 की धारा 562 और 1958 अधिनियम की धारा 18 में भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 की धारा 5(2) के संदर्भों को अनिवार्य रूप से नव अधिनियमित संहिता और अधिनियम में उनसे संबंधित प्रावधानों के संदर्भ के रूप में पढ़ा जाना चाहिए। नतीजतन, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) के तहत दोषसिद्धि के लिए, परिवीक्षा अधिनियम के तहत प्रतिपादित सिद्धांतों को उक्त अधिनियम की धारा 18 के मद्देनजर बिल्कुल भी विस्तारित नहीं किया जा सकता है, जो 1947 के पुराने अधिनियम की धारा 5(2) पर लागू नहीं किया जा सकता है जो 1988 के अधिनियम की धारा 13 के अनुरूप है। दं.प्र.सं., 1973 की धारा 360 के संबंध में, परिवीक्षा अधिनियम के प्रावधानों को दिल्ली में विस्तार और प्रवर्तन की तिथि को और उससे, परिवीक्षा अधिनियम की धारा 19 के मद्देनजर, जो धारा 18, धारा 562 दं.प्र.सं. 1898 के प्रावधानों के अधीन है, उन राज्यों या भाग पर लागू नहीं होगा जहां परिवीक्षा अधिनियम लागू किया गया है जिसे निरस्त कर दिया गया है और दं.प्र.सं., 1973 की धारा 360 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है, धारा 360 को बिल्कुल भी लागू या लागू नहीं किया जा सकता है। इसके

विपरीत अपनाया गया दृष्टिकोण कानूनी रूप से टिकाऊ नहीं है और इसे अनुमोदित नहीं किया जा सकता है। [637-एच;638-ए-सी]

बिष्णु देव शॉ बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, एआईआर (1979) एससी 964; इशर दास बनाम पंजाब राज्य, एआईआर (1972) एससी 1295; सोमनाथ पुरी बनाम राजस्थान राज्य, एआईआर (1972) एससी. 1490; न्यू सेंट्रल जूट मिल्स कं. लिमिटेड बनाम द असिस्टेंट कलेक्टर ऑफ़ सेंट्रल एक्साइज, इलाहाबाद और अन्य, एआईआर (1971) एससी 454 और बिहार राज्य बनाम एस.के.रॉय, एआईआर (1966) एससी 1995, उल्लेख किया गया।

1.3. 1947 के पुराने अधिनियम की धारा 5(2) परंतुक में निहित प्रावधानों के विपरीत, जिसमें लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले किसी भी "विशेष कारणों" के लिए एक वर्ष की न्यूनतम सजा से कम सजा देने का प्रावधान था, 1988 के अधिनियम में ऐसा नहीं किया गया था कि ऐसी कोई शक्ति रखेगा जिससे संबंधित न्यायालय निर्धारित न्यूनतम सजा से कम पर कोई नरमी दिखा सके। उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने संहिता के तहत भी परिवीक्षा का लाभ देने में गलती की। यद्यपि उच्च न्यायालय द्वारा परिवीक्षा का लाभ बढ़ाने के लिए दिए गए कारण प्रासंगिक नहीं हो सकते हैं, लेकिन निर्धारित न्यूनतम सजा से नीचे जाने के लिए उचित या विशेष कारण हैं जो किसी भी स्थिति में पूरी तरह से अस्वीकार्य है, कारावास की सजा को सीमित करने के लिए इसे ध्यान में रखा जाता है। अधिनियम की धारा 7 के तहत न्यूनतम छह महीने और धारा 13(2) के तहत न्यूनतम एक वर्ष, दोनों सजाएं एक साथ चलेंगी।

विचारण न्यायालय द्वारा व्यतिक्रम खंड के साथ जुर्माना लगाने की पुष्टि की गई है। [638-एफ-एच; 639-ए]

एन.एम. पार्थसारथी बनाम राज्य द्वारा एस.पी.ई. [1992] 2 एससीसी 198 और बलराम स्वैन बनाम उड़ीसा राज्य, [1991] पूरक 1 एससीसी 510, अनवधानता के कारण अभिनिर्धारित।

अधीक्षक केंद्रीय उत्पाद शुल्क, बैंगलोर बनाम बाहुबली, एआईआर (1979) एससी 1271, भरोसा किया।

जे एंड के राज्य बनाम विनय नंदा [2001] 2 एससीसी 504, संदर्भित।

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील सं. 532/2004

आपराधिक अपील सं. 471/1999 में दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांक 29.10.2002 से।

एल.एन. राव, अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल, अमित महाजन, उदय ललित और पी. परमेस्वरन, अपीलार्थी की ओर से।

एम.एन. कृष्णमणि और अजय शर्मा, प्रत्यर्थी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया –

अरिजीत पासायत, न्यायाधिपति

अनुमति अनुदत्त की गई।

विवादित निर्णय द्वारा दिल्ली उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह बरकरार रखते हुए कि प्रतिवादी-अभियुक्त की भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (संक्षेप में 'अधिनियम') के तहत दोषसिद्धि करते हुए उसे दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में 'संहिता') की धारा 360 के तहत उपलब्ध लाभों का हकदार ठहराया। राज्य ने बाद के दृष्टिकोण की वैधता पर सवाल उठाया है।

संक्षेप में तथ्यात्मक पृष्ठभूमि इस प्रकार हैः

प्रतिवादी-अभियुक्त तत्कालीन डीईएसयू कार्यालय में वाणिज्यिक अधीक्षक के रूप में कार्यरत था। एक उपभोक्ता महाबीर प्रसाद (जिसे बाद में 'शिकायतकर्ता' के रूप में संदर्भित किया गया है) से 1,500 रुपये की रिश्वत मांगने और स्वीकार करने के लिए अधिनियम की धारा 7 और 13 (2) के साथ-साथ धारा 13 (1) (डी) के तहत दंडनीय अपराध के आरोप में उनके खिलाफ कार्रवाई शुरू की गई थी। विशेष न्यायाधीश, दिल्ली द्वारा परीक्षण के बाद, उसे दोषी पाया गया और अधिनियम की धारा 7 के तहत अपराध के लिए व्यतिक्रम शर्त के साथ 20 महीने के कठोर कारावास और 2,000 रुपये के जुर्माने की सजा सुनाई गई और अधिनियम की धारा 13 (2) के तहत दंडनीय अपराध के लिए व्यतिक्रम शर्त के साथ 2,000 रुपये का जुर्माना लगाया गया। एक अपील आपराधिक अपील संख्या 471/1999 दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष दायर की गई। आक्षेपित निर्णय से उच्च न्यायालय ने माना कि अपराध स्पष्ट रूप से किए गए थे, और दोषसिद्धि को बरकरार रखा गया, लेकिन इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि प्रतिवादी-अभियुक्त लगभग 22 दिनों तक हिरासत में रहा है संहिता की धारा 360 का

लाभ दिया। यह माना गया था कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 (संक्षेप में 'परिवीक्षा अधिनियम') की प्रयोज्यता से संबंधित रोक अधिनियम के तहत अपराधों के संबंध में प्रभावी नहीं थी, हालांकि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 (संक्षेप में 'पुराना अधिनियम') के तहत निषेध था। यह नोट किया गया कि निर्धारित न्यूनतम सजा एक वर्ष थी। कथित तौर पर उम्र, चरित्र, व्यवहार और उस स्थिति को ध्यान में रखते हुए जिसमे अपराध पाया गया था, प्रतिवादी-आरोपी को सजा भुगतने के बजाय अच्छे आचरण की परिवीक्षा पर रिहा करने का निर्देश दिया गया था।

अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से गलत है। इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा है कि जहां एक क़ानून न्यूनतम सजा निर्धारित करता है, न्यायालय सजा को और कम नहीं कर सकती है। जम्मू और कश्मीर राज्य बनाम विनय नंदा, [2001] 2 एससीसी 504 में इस न्यायालय के एक निर्णय का संदर्भ दिया गया था। अपराध की गंभीरता और अधिनियम के तहत उत्पन्न किसी भी अपराध की श्रृंखलाबद्ध प्रतिक्रिया स्पष्ट रूप से धारा 360 को अनुपयुक्त बनाती है। न्यूनतम सजा को कम करके वैधानिक उद्देश्य को अप्रत्यक्ष रूप से कमजोर नहीं किया जा सकता है। सामान्य खंड अधिनियम, 1897 (संक्षेप में 'सामान्य खंड अधिनियम') की धारा 8 के संचालन द्वारा, पुराने अधिनियम में निहित रोक स्पष्ट रूप से अधिनियम पर भी लागू होती है।

जवाब में, प्रतिवादी-अभियुक्त के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय ने एक लाभकारी प्रावधान यानी संहिता की धारा 360 के तहत शक्तियों का

उपयोग किया है, भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 136 (संक्षेप में 'संविधान') के तहत अधिकार क्षेत्र का उपयोग करते समय किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। परिवीक्षा अधिनियम के प्रावधानों के तहत लाभ देने के लिए अधिनियम में किसी भी रोक के अभाव में, उक्त अधिनियम के प्रावधानों को भी लागू किया जा सकता था, जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा नोट किया गया है। किसी भी स्थिति में उच्च न्यायालय द्वारा आकस्मिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए संहिता की धारा 360 को सही ढंग से लागू किया गया है। परिवीक्षा अधिनियम की धारा 18 में निर्धारित किया कि अधिनियम पुराने अधिनियम के तहत अपराधों पर लागू नहीं था। पुराने अधिनियम की धारा 5(2) का विशेष संदर्भ दिया गया था जो अधिनियम की धारा 13 से मेल खाती है। लेकिन 1988 में अधिनियम बन्ने और लागू होने के बाद परिवीक्षा अधिनियम में कोई बदलाव नहीं किया गया था। एस नटराजन बनाम मैसूर राज्य, [1979] 4 एससीसी 542, एन.एम. पार्थसारथी बनाम एस.पी.ई., [19921 2 एससीसी 198 और बलराम स्वैन बनाम उड़ीसा राज्य,[1991] पूरक । एससीसी 510 में कहा गया है कि लंबे समय बीत जाने के बाद आरोपी को वापस जेल भेजना उचित नहीं होगा।

परिवीक्षा अधिनियम में संशोधन न किए जाने पर बहुत जोर दिया गया जिसमें पुराने अधिनियम का उल्लेख किया गया था न कि वर्तमान अधिनियम का। यह प्रस्तुत किया गया था कि चूंकि परिवीक्षा अधिनियम में कोई संगत परिवर्तन नहीं हुआ है, इसलिए, उक्त अधिनियम के प्रावधानों को अधिनियम के तहत मामलों पर लागू नहीं किया जा सकता है। यह तर्क सामान्य खंड अधिनियम की धारा 8 में निहित सिद्धांतों की अनदेखी करता है। जब किसी अधिनियम को निरस्त किया जाता है और फिर से

अधिनियमित किया जाता है जब तक कि विधायिका द्वारा एक अलग इरादा व्यक्त नहीं किया जाता है, तो निरस्त अधिनियम के संदर्भ को इस प्रकार पुन: अधिनियमित प्रावधानों के संदर्भ के रूप में माना जाएगा।

प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह दिखाने के लिए संदर्भित निर्णय कि इस न्यायालय ने देरी के कारण परिवीक्षा अधिनियम या संहिता की धारा 360 के तहत लाभ बढ़ाया था, वैधानिक सलाखों के संदर्भ के बिना कोई मिसाल मूल्य नहीं हो सकता है और इसे अनवधानता के कारण प्रतिपादित किया गया है।

अपराध कृत्य का गठन 20.1.95 को प्रत्यर्थी द्वारा किया गया था जो दिल्ली विद्युत बोर्ड का कर्मचारी था और सी.सी. सं.59/99 में दिनांक 8.9.99 के एक निर्णय द्वारा, विशेष न्यायाधीश दिल्ली ने प्रतिवादी को अधिनियम की धारा 7 के तहत दोषी ठहराया और व्यतिक्रम शर्त के साथ 2,000 रुपये के जुर्माने के भुगतान के अलावा 20 महीने के कठोर कारावास की सजा सुनाई। इसके अलावा अधिनियम की धारा 13(2) के तहत उसे दोषी ठहराया गया और व्यतिक्रम शर्त के साथ 2,000 रुपये के जुर्माने के भुगतान के अलावा 40 महीने के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई। संहिता की धारा 360 का लाभ देने के लिए प्रतिवादी का दावा, जिसे उच्च न्यायालय में विद्वान एकल न्यायाधीश के साथ स्वीकृति का पक्ष मिला, ऐसा लगता है कि पुराने अधिनियम के प्रावधानों के विपरीत है, जो परिवीक्षा पर दोषी के मामले में रिहाई पर रोक लगाता है, अधिनियम में ऐसा कोई प्रतिबंध नहीं था और कुछ असाधारण परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, (ए) कि मांग और स्वीकृति 1500 रुपये की मामूली राशि की थी,

(बी) प्रतिवादी सेवा से मुकदमे के दौरान सेवानिवृत्त हो गया, (सी) कि वह 64 वर्ष का हो गया था, और (डी) कि उसकी पारिवारिक परिस्थितियां सही नहीं थीं और वह 22 दिनों तक हिरासत में रहा। विद्वान एकल न्यायाधीश की राय में उपरोक्त तथ्य परिवीक्षा का लाभ देने के लिए पर्याप्त थे। यह दृष्टिकोण और निष्कर्ष हैं जो इस अपील में चुनौती के अधीन हैं।

संसद ने परिवीक्षा अधिनियम अधिनियमित किया है और इसकी धारा 1(3) में यह निर्धारित किया है कि यह किसी राज्य में उस तारीख को लागू होगा जिसे राज्य सरकार, सरकारी राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे। भारत के राजपत्र दिनांक 23.12.1961 में एक अधिसूचना द्वारा इस अधिनियम को 29.12.1960 से पूरे दिल्ली राज्य में लागू और लागू करने योग्य बनाया गया था। इस अधिनियम की धारा 19 में कहा गया है कि धारा 18 के उपबंधों के अधीन रहते हुए दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 562 (जिसे बाद में 'पुरानी संहिता' कहा जाता है) उन राज्यों या भागों पर लागू नहीं होगी जिनमें परिवीक्षा अधिनियम लागू किया गया है। पुरानी संहिता को निरस्त कर दिया गया और संहिता द्वारा प्रतिस्थापित किया गया और संहिता की धारा 360 पुरानी संहिता में धारा 562 के अनुरूप प्रावधान है। बिष्णु देव शॉ बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, एआईआर (1979) एससी 964 में इस न्यायालय ने फैसला सुनाया कि संहिता की धारा 360 पुरानी संहिता 562 में फिर से लागू होती है। इसके अलावा परिवीक्षा अधिनियम की धारा 18 में यह निर्धारित किया गया है कि उक्त अधिनियम में कुछ भी सुधारक विद्यालय अधिनियम, 1897 की धारा 31 या पुराने अधिनियम की धारा 5 की उप-धारा (2) के प्रावधानों को प्रभावित नहीं करेगा। इस न्यायालय ने ईशर दास

बनाम पंजाब राज्य एआईआर (1972) एससी 1295 और सोम नाथ पुरी बनाम राजस्थान राज्य, एआईआर (1972) एससी 1490 मामलों में दिए गए निर्णयों में विशेष रूप से धारा 18 का उल्लेख करते हुए अभिनिर्धारित किया है कि उक्त प्रावधान पुराने अधिनियम की धारा 5 की उप-धारा (2) के तहत परिवीक्षा अधिनियम को इसके संचालन को स्पष्ट रूप से बाहर करके किसी अपराध पर लागू नहीं किया जाता है। पुनः अधिनियमित अधिनियम की धारा 13 पुराने अधिनियम की धारा 5(2) के अनुरूप प्रावधान है।

संहिता और अधिनियम के नए अधिनियमन के मद्देनजर, उपरोक्त प्रावधानों के प्रभाव की आवश्यकता है और सामान्य खंड अधिनियम की धारा 8 के आलोक में इस पर विचार किया जाना चाहिए, जो इस प्रकार है:

> **"8.**निरस्त अधिनियमितियों के संदर्भों का निर्माण**.** [(1)] जहां यह अधिनियम, या कोई [केंद्रीय अधिनियम] या इस अधिनियम के प्रारंभ होने के बाद बनाया गया विनियमन, संशोधन के साथ या बिना संशोधन के, पूर्व अधिनियमन के किसी भी प्रावधान को निरस्त और पुन: अधिनियमित करता है, तो किसी अन्य में संदर्भ अधिनियमन या इस प्रकार निरस्त किए गए प्रावधान के किसी लिखत में, जब तक कि कोई भिन्न आशय प्रकट न हो, इस प्रकार पुन: अधिनियमित किए गए प्रावधान के संदर्भ के रूप में अर्थ लगाया जाएगा।

[(2) [जहां अगस्त, 1947 के पन्द्रहवें दिन से पहले, यूनाइटेड किंगडम की संसद के किसी भी अधिनियम ने पूर्व अधिनियमन के किसी भी प्रावधान को संशोधन के साथ या बिना संशोधन के निरस्त और पुनः अधिनियमित किया था, तो किसी भी [केंद्रीय अधिनियम] या में संदर्भ इस प्रकार निरस्त किए गए प्रावधान के किसी भी विनियम या लिखत में, जब तक कि एक अलग इरादा प्रकट नहीं होता है, तब तक इसे फिर से लागू किए गए प्रावधान के संदर्भ के रूप में माना जाएगा]"

उक्त प्रावधान का उद्देश्य, निश्चित और स्पष्ट रूप से ज्ञात यह है कि जहां किसी भी अधिनियम या विनियमन को निरस्त किया जाता है और पुनः अधिनियमित किया जाता है, किसी अन्य अधिनियम में निरस्त पूर्व अधिनियम के प्रावधानों के संदर्भ को फिर से अधिनियमित नए प्रावधान के संदर्भ के रूप में पढ़ा और समझा जाना चाहिए जब तक कि कोई भिन्न इरादा प्रकट न हो। ऐसी ही स्थितियों में इस न्यायालय ने स्थिति से निपटने के लिए सामान्य खंड अधिनियम की धारा 8 पर भरोसा किया था। न्यू सेंट्रल जूट मिल्स कंपनी लिमिटेड बनाम दा असिस्टेंट कलेक्टर ऑफ़ सेंट्रल एक्साइज, इलाहाबाद और अन्य, एआईआर (1971) एससी 454 में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि सीमा शुल्क अधिनियम, 1962 के प्रावधानों को इसके स्थान पर पढ़ना संभव है। समुद्री सीमा शुल्क अधिनियम, 1878 का उल्लेख केंद्रीय उत्पाद शुल्क और नमक अधिनियम, 1944 की धारा 12 में पाया गया। बिहार राज्य बनाम एस.के.रॉय, एआईआर (1966) एससी 1995 में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया

कि सामान्य धारा अधिनियम की धारा 8 के आधार पर, धारा 2 के खंड (ई) में 'नियोक्ता' शब्द की परिभाषा का संदर्भ दिया गया है। कोयला खान भविष्य निधि और बोनस योजना अधिनियम, 1948 में बनाए गए भारतीय खान अधिनियम, 1923 को खान अधिनियम, 1952 की धारा 2 के खंड (I) में 'मालिक' की परिभाषा के संदर्भ के रूप में माना जाना चाहिए, जिसे निरस्त कर दिया गया और 1923 अधिनियम को पुनः अधिनियमित किया गया। नतीजतन, परिवीक्षा अधिनियम की धारा 19 में पुराने कोड की धारा 562 और परिवीक्षा अधिनियम की धारा 18 में पुराने अधिनियम की धारा 5(2) के संदर्भों को क्रमशः नव अधिनियमित संहिता और अधिनियम में उनके संबंधित प्रावधानों के संदर्भ के रूप में अनिवार्य रूप से पढ़ा जाना चाहिए। नतीजतन, अधिनियम की धारा 13(2) के तहत दोषसिद्धि के लिए परिवीक्षा अधिनियम के तहत प्रतिपादित सिद्धांतों को उक्त अधिनियम की धारा 18 में निहित आदेश के मद्देनजर बिल्कुल भी विस्तारित नहीं किया जा सकता है। जहां तक संहिता की धारा 360 का सवाल है, दिल्ली में परिवीक्षा अधिनियम के प्रावधानों के विस्तार और प्रवर्तन की तारीख से पुरानी संहिता की धारा 562 के तहत शक्तियाँ और इसके निरसन और संहिता की धारा 360 के तहत प्रतिस्थापन शक्तियाँ के बाद, बिल्कुल भी लागू या लागू नहीं किया जा सकता है, जैसा कि मौजूदा मामले में किया गया है। इसके विपरीत अपनाया गया दृष्टिकोण कानूनी रूप से टिकाऊ नहीं है और इसे हमारी मंजूरी नहीं मिल सकती है।

इसके अलावा अधिनियम की धारा 7 और धारा 13 अधिकतम सजा के साथ-साथ जुर्माना लगाने के अलावा क्रमशः छह महीने और एक वर्ष की न्यूनतम सजा का

प्रावधान करती हैं। धारा 28 में आगे कहा गया है कि अधिनियम के प्रावधान उस समय लागू किसी अन्य कानून के अतिरिक्त होंगे न कि उसके निरादर में। अधीक्षक केंद्रीय उत्पाद शुल्क, बैंगलोर बनाम बाहुबली, एआईआर (1979) एससी 1271 के मामले में, भारत रक्षा नियमों के नियम 126-पी(2)(ii) के सम्बन्ध में, जिसमे न्यूनतम सजा निर्धारित की गई थी और भारत रक्षा अधिनियम,1962 की धारा 43, परिवीक्षा अधिनियम के अंतर्गत अनुतोष के लिए दावे के सन्दर्भ में अधिनियम की धारा 28 में निहित आशय के लगभग सामान थी, इस न्यायालय ने पाया कि ऐसे मामलों में जहां परिवीक्षा अधिनियम के बाद अधिनियमित एक विशिष्ट अधिनियम कारावास की न्यूनतम सजा निर्धारित करता है, परिवीक्षा अधिनियम के प्रावधानों को लागू नहीं किया जा सकता है यदि विशेष अधिनियम में विशेष अधिनियम के अपमान में किसी अन्य अधिनियम के सन्दर्भ के बिना इसे लागू करने का कोई प्रावधान शामिल है, अभियुक्त को परिवीक्षा अधिनियम का लाभ देने की कोई गुंजाईश नहीं है। जब तक कि पुराने अधिनियम की धारा 5(2) के परंतुक में लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले किसी भी "विशेष कारण" के लिए एक वर्ष की न्यूनतम सजा से कम सजा देने का प्रावधान हो, अधिनियम में ऐसे कोई शक्ति नहीं थी जिससे संबंधित न्यायालय निर्धारित न्यूनतम सजा से कम पर कोई उदारता दिखा सके। नतीजतन, उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने संहिता के तहत भी परिवीक्षा का लाभ देने में कानून की गंभीर त्रुटि की। साथ ही हम यह भी देख सकते हैं कि यद्यपि उच्च न्यायालय द्वारा परिवीक्षा का लाभ बढ़ाने के लिए दिए गए कारण प्रासंगिक नहीं हो सकते हैं, निर्धारित न्यूनतम सजा से नीचे जाने के लिए उचित या विशेष कारण हैं जो किसी भी स्थिति में

पूरी तरह से अस्वीकार्य है, जैसा कि ऊपर दिया गया है, हम उन्हें अधिनियम की धारा 7 के तहत कारावास की सजा को न्यूनतम छह महीने और धारा 13(2) के तहत न्यूनतम एक वर्ष तक सीमित करने के लिए ध्यान में रखते हैं, दोनों सजाएं एक साथ चलेंगी। जहां तक दो अलग-अलग मामलों में व्यतिक्रम खंड के साथ विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा लगाए गए अतिरिक्त जुर्माने का सवाल है, वे अप्रभावित रहेंगे और एतद्वारा इसकी पुष्टि की जाती है।

अपील स्वीकार की जाती है, परन्तु केवल कारावास की सजा में उचित संशोधन के साथ, जैसा कि ऊपर बताया गया है। प्रत्यर्थी को सजा की शेष अवधि भुगतने के लिए हिरासत के लिए आत्मसमर्पण करना होगा।

एन.जे. अपील स्वीकार की गई।

यह अनुवाद आर्टिफ़िश्यल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" के जरिये अनुवादक अधिवक्ता विनायक कुमार जोशी की सहायता से किया गया है ।

अस्वीकरण- इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।

*****